मिथक-परंपराओं की पुनर्व्याख्या से इतिहास की खोज

ब्राह्मणवादी इतिहासबोध कालक्रम आधारित, तथ्यपरक न होकर मिथकपरक पौराणिक है, जो हकीकत को मिथकीय रहस्यों में ढंक देता है। स्थापित मान्यताओं को खंडित किए बिना नई मान्यताएं स्थापित नहीं की जा सकतीं। ईश मिश्र की समीक्षा :

Like 222

ईश मिश्रा September 28, 2018

'महिषासुर : मिथक व परंपराएं' प्रमोद रंजन द्वारा संपादित एक महत्वपूर्ण किताब है। यह किताब दुर्गा-महिषासुर के मिथक का पुनर्पाठ और 2011 में जेएनयू में महिषासुर दिवस के आयोजन से शुरू विमर्श को एक नया मुकाम देती है। इसमें इस विमर्श के विविध आयामों को समेटने वाले लेख हैं। यहां यह जानना भी जरूरी है कि इसके पहले प्रमोद रंजन के ही संपादन में 'महिषासुर : एक जननायक' (2016) आयी थी।

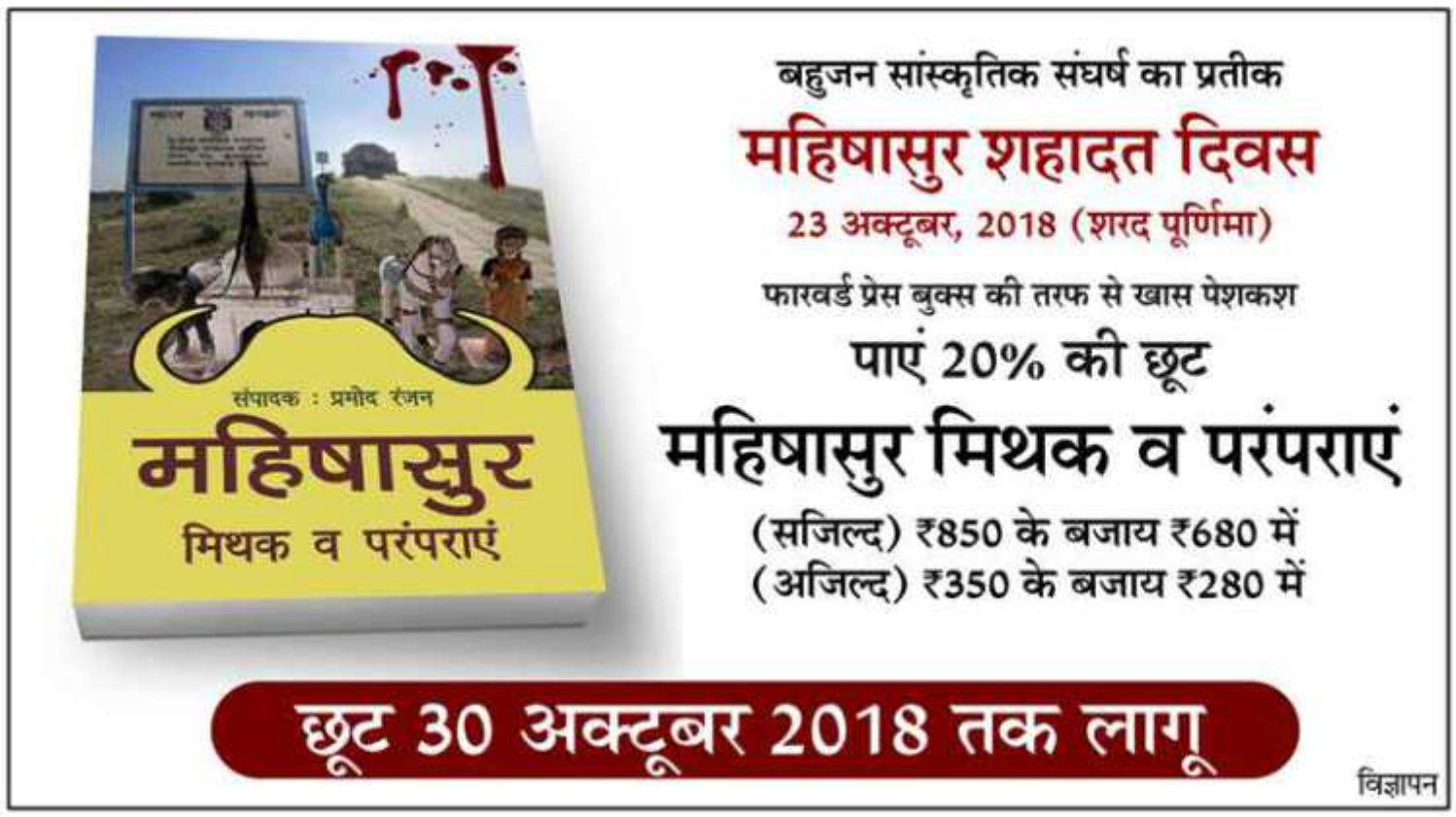

'महिषासुर : मिथक व परंपराएं' किताब 6 खंडों में विभाजित है। इन विविध खंडों में अनेक जगहों की परंपरा-प्रतीकों; मिथक-उत्सवों के शोधपूर्ण अध्ययन-विश्लेषण पर आधारित लेखों का संकलन किया गया है। परिशिष्ट में महिषासुर दिवस से संबंधित तथ्य हैं। वैसे तो खंड 6 भी परिशिष्ट सा ही है। इसमें जोतीराव फुले की प्रार्थना से लेकर संजीव चंदन के नाटक 'असुरप्रिया' जैसी नई धारा की साहित्यिक रचनाएं हैं। प्रमोद रंजन के संपादन में आयी पहली पुस्तक 'महिषासुर: एक जननायक' की मेरे द्वारा की गई समीक्षा का उपशीर्षक था 'ब्राह्मणवाद के विरुद्ध एक सांस्कृतिक विद्रोह, मौजूदा समीक्षार्थ पुस्तक में संकलित लेख तस्दीक करते हैं कि विद्रोह व्यापक सांस्कृतिक आंदोलन का रूप ले चुका है। पिछली पुस्तक की उपरोक्त समीक्षा में एक अफ्रीकी कहावत का हवाला दिया था, "जब तक शेरों के अपने इतिहासकार नहीं होंगे, इतिहास शिकारियों का ही महिमामंडन करता रहेगा"।

बहुजन विमर्श को विस्तार देतीं फारवर्ड प्रेस की पुस्तकें

मौजूदा संकलन के लेख शेरों के इतिहासकारों के उदय की नहीं, दावेदारी की घोषणाएं हैं। जैसा कि पुस्तक के जिल्द परिचय में कहा गया है, "असुर मिथकों के आधार पर खड़ा हुआ महिषासुर आंदोलन फुले, आंबेडकर और पेरियार के भारतीय सांस्कृतिक इतिहास को देखने के नजरिए को व्यापक बहुजन तबके तक ले जाना चाहता है, जिसमें आदिवासी,

दलित, पिछड़े और महिलाएं शामिल हैं। इस सांस्कृतिक संघर्ष का केंद्रीय कार्यभार पुराणों के वाग्जाल में ढंक दिए गए बहुजन इतिहास को उजागर करना है, हिंदू मिथकों में अपमानित और लांक्षित, असुर, राक्षस और दैत्य ठहराए गए महान नायकों के वास्तविक चरित्र को सामने लाना है"।

ब्राह्मणवादी इतिहासबोध कालक्रम आधारित, तथ्यपरक न होकर मिथकपरक पौराणिक है, जो हकीकत को मिथकीय रहस्यों में ढंक देता है। स्थापित मान्यताओं को खंडित किए बिना नई मान्यताएं स्थापित नहीं की जा सकतीं। "स्थापित और आदर्श के रूप में प्रस्तुत की गयीं सांस्कृतिक संरचनाओं को तोड़े बिना वर्तमान में स्थापित प्रभुत्व को तोड़ा नहीं जा सकता"।

महोबा के चौकीसोरा में भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण द्वारा संरक्षित भैंसासुर का स्मारक (फोटो एफपी ऑन द रोड, 2017)

इस पुस्तक के सभी 6 खंड अलग-अलग, एक-दूसरे से संबद्ध पुस्तक के समान हैं। सबकी समेकित विस्तृत समीक्षा की गुंजाइश नहीं है, वह भी अपने-आप में एक किताब बन जाएगी। इसलिए यहां पुस्तक में उद्घाटित नए तथ्य-तर्कों की संक्षिप्त चर्चा की जाएगी। मैं पुस्तक के संपादक और लेखकों की इस मूल मान्यता से सहमत हूं कि पौराणिक मिथकों के पुनर्पाठ एवं असुर प्रतीक-परंपराओं के शोध तथा प्रस्तुति, महिषासुर दिवसों के आयोजन, ब्राह्मणवादी सांस्कृतिक मान्यताओं के विरुद्ध एक सांस्कृतिक आंदोलन का रूप ले चुका है। ब्राह्मणवादी इतिहासबोध कालक्रम के अनुसार, तथ्यपरक नहीं, बल्कि पौराणिक चोले में लिपटा मिथकीय इतिहासबोध है, जो शीर्ष (सतयुग) से रसातल (कलियुग) की अधोगामी यात्रा करता है। इसलिए मिथकों का तर्कसम्मत रहस्योघाटन अपने तरह की एक सांस्कृतिक क्रांति से कम नहीं है। प्रमोद रंजन, पुस्तक की भूमिका में सांस्कृतिक वर्चस्व को उत्पादन प्रणाली, यानि राजनैतिक-आर्थिक वर्चस्व से जोड़ते हुए तर्क देते हैं, "मसला सिर्फ सांस्कृतिक नहीं, आर्थिक और राजनैतिक भी है। एक वर्ग ने इन्हीं कथाओं के बूते आर्थिक और राजनैतिक वर्चस्व कायम किया है"। (पृ. i)

यह भी पढ़ें : 'महिषासुर मिथक और परंपराएं' : वर्तमान के सापेक्ष मिथकों का पुनर्पाठ

पुस्तक के पहले खंड में तीन शोधपरक यात्रा-वृतांत हैं जिन्हें समाजशात्रीय, अकादमिक शब्दावली में फील्ड-स्टडी कहा जा सकता है। वैसे भारत में शासक जातियां ही शासक वर्ग भी रही हैं। इस खंड की शुरुआत प्रमोद रंजन की 'महोबा में महिषासुर की खोज' (पृ. 17-50) से होती है। वे उत्तर प्रदेश तथा मध्य प्रदेश में पसरे बुंदेलखंड के स्थानीय प्रतीकों; परंपराओं; मूर्ति-मंदिरों; मेले-उत्सवों की पड़ताल से इस बात का पुख्ता प्रमाण देते हैं कि खजुराहो समेत, इलाके के कई क्षेत्रों में पशुपालक समुदायों के आराध्य के रूप में किसी-न-किसी रूप में महिषासुर की मौजूगी रही है – जैसे मैकासुर, भैंसासुर, कारसदेव, ग्वाल बाबा।

झारखंड के गुमला जिले के जोभीपाट गांव में हाल के वर्षों में बनायी गयी एक देवी मंदिर परिसर में लगाए गए चापाकल से पानी भरती असुर महिलाएं (फोटो – एफपी ऑन द रोड, 2016)

बहुत खोजबीन के बाद उन्हें "भैंसासुर स्मारक मंदिर चौका तहसील, कुलपहाड़–भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण" का बोर्ड दिखा। "एक ऊंचे टीले पर स्थित पत्थरों का वह ढांचा किसी कोण से 'मंदिर' की तरह नहीं दिखता है। मुख्य ढांचा काफी प्राचीन प्रतीत होता है। ..... अंदर झांकने पर एक त्रिकोणी सी आकृति दिख रही है, जो शिवलिंग जैसी लगती है। यह वही पिंडी है जो असुर-आदिवासी परंपराओं में मिलती है"। (पृ. 20-21) महोबा जिले में ही उन्हें गोरखनाथ पहाड़ी पर एक और महिषासुर मंदिर मिलता है जहां "भादो महीने के छठे दिन" पूजा होती है, क्योंकि महिषासुर "गाय-भैंसों के लिए ज्यादा माने जाते हैं। ..... यादव लोग यहां आकर साल में एक बार इनकी विशेष पूजा करते हैं"।(पृ. 25) इलाके में उन्हें और कई मैकासुर या महिषासुर मंदिर या मंदिर के अवशेष मिलते हैं। पहले खंड के पहले लेख की चर्चा का समापन लेखक के इस सवाल से करना अप्रासंगिक नहीं होगा, "वे हारे क्यों? श्रमण-बहुजन परंपरा का अधिकांश साहित्य मौखिक रहा है। यह संस्कृति निजी स्वामित्व की विरोधी रही है, चाहे वह भौतिक संसाधन हो या ज्ञान"। (पृ. 50) लेखक का यह सवाल जेम्स फ्रॉस्ट के उपन्यास में, दास-विद्रोह की पराजय के बाद पेड़ से लटकाए गए विद्रोही नेताओं, स्पार्टकस और डेविड के बीच संवाद की याद दिलाता है, जब डेविड पूछता है, "हम हारे क्यों?" स्पार्टकस की सांसें जवाब देने के पहले ही थम जाती हैं।

झारखंड के गुमला में अमतीपानी बॉक्साइट खदान के मजदूर पर्यावरण दिवस समारोह की तैयारी करते हुए (फोटो : एफपी ऑन द रोड, 2016)

नवल किशोर कुमार का यात्रा वृत्तांत, 'छोटानागपुर के असुर' (पृ. 51-76) झारखंड के पठारों में रहने वाले आदिवासी, असुर आदिवादी समाज की विशिष्ट परंपराओं, रीति-रिवाजों, स्त्रियों की आजादी के परंपरागत अधिकारों तथा उनकी विरासत का रोचक समाजशास्त्रीय विवरण तथा राजनैतिक अर्थशास्त्र का संक्षिप्त इतिहास है। वे महिषासुर के आराधना स्थलों की पड़ताल तथा पढ़े-लिखे कुछ असुरों और महिषासुर आंदोलन के कार्यकर्ताओं अनिल असुर तथा सुषमा असुर तथा अन्य लोगों से बातचीत के माध्यम से असुर समुदाय के जनतांत्रिक सामुदायिक मूल्यों का सजीव चित्रण करते हैं। सुषमा असुर का एक लेख महिषासुर: एक जननायक में भी था और एक लेख इस संकलन के दूसरे खंड में है। शादी की 'ढोल जतरा यानि असुरों का स्वयंवर' तथा घर ढुकु शादी की जनतांत्रिक प्रथाएं हैं, जिसमें लड़के-लड़की को समान अधिकार हैं। "सुषमा असुर के मुताबिक असुर घर ढुकू शादी भी करते हैं। देश भर में नारी अस्मिता पर विमर्श चलाने वालों को यह जानकर आश्चर्य होगा कि यदि कोई लड़की किसी लड़के को पसंद करे तो वह उसके घर में जबरन प्रवेश कर सकती है। परिजनों की स्वीकार्यता अनिवार्य नहीं होती। असुरों की यह निराली परंपरा है"। (पृ. 65)

मैसूर में महिषासुर की प्रतिमा के साथ एफपी की टीम (फोटो – एफपी ऑन द रोड, 2017)

इस खंड का अंतिम लेख, 'राजस्थान से कर्नाटक वाया महाराष्ट्र: तलाश महिषासुर की' (पृ. 77-90) "बहुजन संस्कृति की तलाश" अनिल वर्गीज की दिल्ली से कन्याकुमारी की सड़क यात्रा वृत्तांत है। राजस्थान के बिलाड़ा के राजा बलि मंदिर से शुरू होकर वाया महाराष्ट्र कर्नाटक के कई स्थानों तक जारी रहती है। मंदिर के मुख्य द्वार पर 'राजा बलि वामन अवतार धाम'। "कुल मिलाकर अब यह राजा बलि का मंदिर नहीं रह गया था। इसे वामन का मंदिर बना दिया गया"। बहुजन प्रतीकों का ब्राह्मणीकरण जारी है।

राजस्थान और गुजरात पार कर महाराष्ट्र में शिर्डी से एलोरा जाते समय, अनिल लिखते हैं, "हमें बैजापुर में म्हसोबा के छोटा सा स्थल दिखा"। डी.डी. कोशांबी के हवाले से अनिल लिखते हैं, "भैंस के सींग वाले देवता, म्हसोबा, दरअसल म्हतोबा या महिषासुर का ही एक अन्य नाम है"। "मील के पत्थर के आकार के सिंदूरी रंग में रंगे एक पिंड और एक दीपक के अलावा इन स्थानों पर कुछ नहीं होता।" यह यात्रा वृत्तांत मैसूर पहुंचकर खत्म होता है जिसके रास्ते में पहाड़ी पर महिष मंदिर पड़ता है। मैसूर और महिषासुर के संबंधों की चर्चा आगे की जाएगी।

महिषासुर से जुड़ी संभावित जगहों की पड़ताल तथा स्थानीय लोगों के आख्यान से देश के विभिन्न भागों में महिषासुर के प्रतीकों तथा आराधना की परंपरा के सबूत पेश करने के बाद, दूसरा खंड, 'मिथक और परंपराएं' (91-180), मिथकों तथा परंपराओं की समीक्षा-पुनर्व्याख्या से संबंधित लेखों का संग्रह है। जैसा कि ऊपर बताया गया है ब्राह्मणवादी इतिहासबोध मिथकीय है, जिससे वास्तविकता को पौराणिक दैवीयता के छद्म से ढका जा सके। मैं प्रमोद रंजन के सांस्कृतिक वर्चस्व तथा आर्थिक और राजनैतिक वर्चस्व के अंतःसंबंधों के वक्तव्य से पूर्ण सहमत हूं, लेकिन सांस्कृतिक वर्चस्व से आर्थिक-राजनैतिक वर्चस्व नहीं स्थापित किया गया बल्कि आर्थिक राजनैतिक वर्चस्व से सांस्कृतिक वर्चस्व। सांस्कृतिक वर्चस्व आर्थिक-राजनैतिक वर्चस्व को घनीभूत करने और बरकरार रखने के औजार का काम करता है।

बालाघाट के लांजी नामक स्थान में नेताम गोंडी वंश के दुर्ग की खुदाई में मिली भगवान् महावीर, गणेश और बुद्ध की मूर्ति जिनका सीधा संबंध श्रमण या लोकायत परम्परा से है

इस खंड के पहले लेख, 'गोंडी पुनेम दर्शन और महिषासुर' (95-144) में संजय जोठे वाजिब सवाल करते हैं, इतिहास के बजाय, मिथकीय पुराण लेखन क्यों? यदि इतिहास मिथकीय पौराणिक भाषा में लिखा हो तो उससे हकीकी इतिहास समझने के लिए उसे डिकोड करना पड़ेगा; पौराणिक, दैवीयता के नकाब को चीरकर उसे नंगा करना पड़ेगा। मैंने महिषासुर पर उपरोक्त पिछली किताब की समीक्षा में, पुराणों के पुनर्पाठ के जरिए, महिषासुर आंदोलन को एक सांस्कृतिक क्रांति की शुरुआत बताया था, यह पुस्तक उस पुनर्पाठ का अगला पड़ाव है। लेकिन यह क्रांति तभी संभव हुई जब वंचित बहुजन को शिक्षा के माध्यम से बौद्धिक संसाधनों की सुलभता हुई। "यह देखकर आश्चर्य और दुख होता है कि इस देश में इतिहास नहीं लिखा गया है, बल्कि उसकी जगह कल्पनाओं से भरे पुराण लिखे गए हैं" (99)। दुख की बात तो है, लेकिन आश्चर्य की बात नहीं है कि यह एक ऐतिहासिक तथ्य है कि किसी समुदाय को गुलाम बनाना हो तो उसे, उसके इतिहास से वंचित कर दो। इस सरकार द्वारा इतिहास के पुनर्मिथकीकरण के मकसद से इतिहास पुनर्लेखन कमेटी का गठन इसकी ताजा मिसाल है। विशद शोध और अध्ययन तथा मिथकों के पुनर्पाठ के आधार पर इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि आदिवासी क्षेत्रों में आज भी "महिषासुर एक सच्चाई हैं। महिषासुर इनके लिए न केवल एक प्रतापी राजा, पूर्वज और मिथकीय चरित्र हैं, बल्कि एक शक्तिशाली शूर-वीर भी रहे हैं"(143)।

सुषमा असुर बताती हैं, "जब हिंदू समुदाय नवरात्रि मनाता है, उस समय असुर समुदाय के लोग, महिषासुर, असुर राजा की मृत्यु का शोक मनाते हैं" (146)। 'दुर्गा शप्तशती का असुर पाठ' में अश्विनी कुमार पंकज निष्कर्ष में अांबेडकर का उद्धरण देते हैं, "ब्राह्मणों ने यह भी नहीं सोचा कि दुर्गा को ऐसी वीरांगना बनाकर जो अकेले सभी असुरों का मान-मर्दन कर सके, वे अपने-अपने देवताओं को भयानक रूप से कायरता का जामा पहना रहे हैं" (151)। धर्मांधता की मुखर विरोध के चलते हिंदुत्ववादी ताकतों की बर्बरता की शिकार, शहीद साथी गौरी लंकेश, 'महिषासुर: एक पुनर्खोज' में कहती हैं, "महिषासुर एक ऐसे व्यक्तित्व का नाम है जो सहज ही अपनी ओर लोगों को खींच लेता है। उन्हीं के नाम पर मैसूर नाम पड़ा है। यद्यपि हिंदू मिथक उन्हें दैत्य के रूप में चित्रित करते हैं, चामुंडी द्वारा उनकी हत्या को जायज ठहराते हैं, लेकिन लोक गाथाएं उससे बिल्कुल भिन्न कहानी कहती हैं" (153)। बीपी महेश चंद्र गुरू, 'कर्नाटक की बौद्ध परंपरा और महिष' (157-60) में तथ्यों तथा ऐतिहासिक साक्ष्यों के अध्ययन से बताते हैं महिषासुर, महिष-मंडल मैसुरु (मैसूर) का प्रगतिशील शासक थे, जिन्होंने समाज के हर तबके का सशक्तीकरण किया, "तथ्यों को तोड़ा-मरोड़ा गया है, लोगों को सच जानने की जरूरत है"।

'आदिवासी देवी चामुंडा और महिषासुर' में मार्कंडेय पुराण को डिकोड कर सिंथिया स्टीफन इस निष्कर्ष पर पहुंचती हैं, "चामुंडा महिषासुर मर्दिनी मिथक ब्राह्मणवादी शक्तियों द्वारा मूल निवासियों/स्थानीय लोगों के विश्वास के तरीकों, मंदिरों, संस्कृति और राजनैतिक स्पेस की पौराणिक व्याख्या करने का एक अन्य उदाहरण है। नवल किशोर कुमार और हरेराम सिंह, 'बिहार में असुर परंपराएं'(165-71) में बिहार में प्रचलित ब्राह्मणवादी और असुर दोनों परंपराओं के कर्मकांडों, उत्सवों तथा लोकगीतों के अध्ययन के आधार पर इस बात पर जोर देते हैं कि "हम असुर परंपरा के प्रकृति

संरक्षण वाले भाग और समतामूलक भाव को स्वीकार करें तथा अनुपयोगी हो चुकी चीजों को छोड़ दें। साथ ही विषमतामूलक ब्राह्मणवादी संस्कृति और उसके कर्मकांडों का तो पूर्ण तिरस्कार आवश्यक है ही"(171)। इस खंड के अंतिम लेख, डॉ. अंबेडकर और असुर' (176-80) में डॉ सिद्धार्थ आंबेडकर से सुविदित विचारों के आधार पर बताते हैं कि आंबेडकर, "अनार्य, असुर, दास और नागों को एक दूसरे का पर्याय मानने के बाद..... असुरों और द्रविडों के रिश्ते पर विचार करते हैं और कहते हैं, "दक्षिण के द्रविडों की उत्पत्ति असुरों से हुई""(180)।

यह भी पढ़ें : प्रेम और न्याय के प्रतीक हैं महिषासुर

खंड 3 'आंदोलन किसका, किसके लिए' (185-239),2011 में जेएनयू में महिषासुर दिवस के आयोजन से उपजे विवाद और विमर्श में 4 सूचनाप्रद, विश्लेषणात्मक एवं सारगर्भित लेखों का संकलन है, जो मेरी राय में इस विमर्श में एक महत्वपूर्ण योगदान है। अपने लेख 'महिषासुर आंदोलन की सैद्धांतिकी: एक संरचनात्मक विश्लेषण' में ग्राम्शी के वर्चस्व के सिद्धांत के परिप्रक्ष्य में आर्थिक संघर्षों के लिए सांस्कृतिक वर्चस्व के विरुद्ध सांस्कृतिक क्रांति की अपरिहार्यता को साबित किया है। "सांस्कृतिक वर्चस्व भौतिक साधनों पर वर्चस्व का वैचारिक आधार होता है। इसकी स्वीकृति मार्क्सवाद में भी मिलती है। मार्क्स उत्पादन के संसाधनों पर वर्चस्व को 'आधार संरचना' कहते हैं और इस आधार संरचना को वैधता प्रदान करने वाले वैचारिक उपकरणों को 'अधिरचना'। वे स्पष्ट कहते हैं, कि आधार संरचना पर जोर देने का अर्थ यह नहीं कि 'अधिरचना' को कम करके आंका जाए। एंतोनियो ग्राम्शी इसे और गहराई में ले जाते हैं और कहते हैं कि प्रभुत्वशाली वर्ग अपनी अपनी संस्कृति को सामान्य चेतना का विषय बना देता है"(193)। इस अर्थ में महिषासुर आंदोलन ब्राह्मणवाद द्वारा निर्मित युग चेतना के विरुद्ध विद्रोह है। ओम प्रकाश कश्यप 'संस्कृति का अब्राह्मणीकरण: बरास्ता महिषासुर आंदोलन' (204-14) में इसी लिए जोर देकर कहते हैं, "परिवर्तनकामी शक्तियों के लिए जितना आवश्यक ब्राह्मणवाद की कमजोरियों को समझना है, उतना ही आवश्यक समानांतर संस्कृति खड़ा करना भी है" (202)। निवेदिता मेनन इस पूरे आंदोलन की अभिन्न अंग और हिंदुत्व गिरोहों के कोप की पात्र रही हैं। अपने विद्वतापूर्ण लेख, ' 'भारत माता और उसकी बगावती बेटियां' (216-38) में महिषासुर आंदोलन को स्त्री प्रज्ञा तथा दावेदारी के आंदोलनों से जोड़कर पेश करती हैं। 'भारत की माता' माता बनने से इंकार करने वाली तथा 'मां-बाप से भी आजादी' मांगने वाली लड़कियों केपिजड़ा तोड़ आंदोलन को ऐतिहासिक बगावती बेटियों की कड़ी के रूप में ब्राह्मणवाद के विरुद्ध जारी सांस्कृतिक आंदोलन के हिस्से के रूप में देखती हैं। भारत माता की हिंदुत्व की अवधारणा की चीड़फाड़ के बाद लिखती हैं, "आरएसएस के हाथ में भारत माता सिर्फ हिंदुत्व के शस्त्रागार की एक कुटिल और जहरीला हथियार बनकर रह गयी हैं, जैसे कि गाय़" (237)।"ये बगावती बेटियां हमें यह याद दिला रही हैं कि राष्ट्र लोगों से ऊपर की कोई चीज नहीं है, बल्कि राष्ट्र लोगों से मिलकर बना है" (238)।

खंड 4, 'असुर: संस्कृति और समकाल' (243-97) में मौजूदा असुर परंपराओं और उनके वैदिक चित्रण पर सूचनाप्रद एवं विश्लेषणात्मक लेख हैं। 'असुरों का जीवनोत्सव' (247-272) में सुरेश जगन्नाथम झारखंड के असुर समुदाय के उत्सवों; लोकगीतों तथा रीति-रिवाजों के बारे में रोचक जानकारियां उपलब्ध कराते हैं। विकास दूबे 'शापित असुर शोषण का राजनैतिक अर्थशास्त्र'(273-92) में आधुनिक युग में असुर जनजाति के संसाधनों के जारी शोषण और उन पर ब्राह्मणवादी सांस्कृतिक हमलों की कहानी बताते हैं।

जैसा कि ऊपर बताया गया है, "जब तक शेरों के अपने इतिहासकार नहीं होंगे, इतिहास शिकारी का महिमामंडन ही होगा"। शेरों के अपने इतिहासकार पैदा हो गए हैं। खंड 5 शेरों के इतिहास कारों के वैकल्पिक साहित्य का संकलन है। मैंने 1991 में एक लेख में लिखा था, "कबीर दलितों को वेद पढ़ने के अधिकार की मांग नहीं कर रहे थे बल्कि वैकल्पिक वेद की रचना की गुहार लगा रहे थे" यह वैकल्पिक वेद की नई ऋचाओं का संकलन है। यह पुस्तक ब्राह्मणवाद के विरुद्ध जारी सांस्कृतिक-बौद्धिक आंदोलन की एक महत्वपूर्ण कड़ी है।

(यह समीक्षा हिंदी मासिक पत्रिका समयांतर के अगस्त, 2018 के अंक में प्रकाशित है। यहां इसे लेखक की अनुमति से पुनप्रर्काशित किया गया है)

(कॉपी संपादन : एफपी डेस्क)

किताब : महिषासुर : मिथक और परंपराएं

संपादक : प्रमोद रंजन

मूल्य : 350 रूपए (पेपर बैक), 850 रुपए (हार्डबाऊंड)

पुस्तक सीरिज : फारवर्ड प्रेस बुक्स, नई दिल्ली

प्रकाशक व डिस्ट्रीब्यूटर : द मार्जिनलाइज्ड, वर्धा/दिल्ली, मो : +919968527911 (वीपीपी की सुविधा उपलब्ध)

ऑनलाइन यहां से खरीदें : https://www.amazon.in/dp/B077XZ863F

फारवर्ड प्रेस वेब पोर्टल के अतिरिक्त बहुजन मुद्दों की पुस्तकों का प्रकाशक भी है। हमारी किताबें बहुजन (दलित, ओबीसी, आदिवासी, घुमंतु, पसमांदा समुदाय) तबकों के साहित्य, संस्कृति, सामाज व राजनीति की व्यापक समस्याओं के सूक्ष्म पहलुओं को गहराई से उजागर करती हैं। पुस्तक-सूची जानने अथवा किताबें मंगवाने के लिए संपर्क करें। मोबाइल : +917827427311, ईमेल : info@forwardmagazine.in

फारवर्ड प्रेस की किताबें किंडल पर प्रिंट की तुलना में सस्ते दामों पर उपलब्ध हैं। कृपया इन लिंकों पर देखें

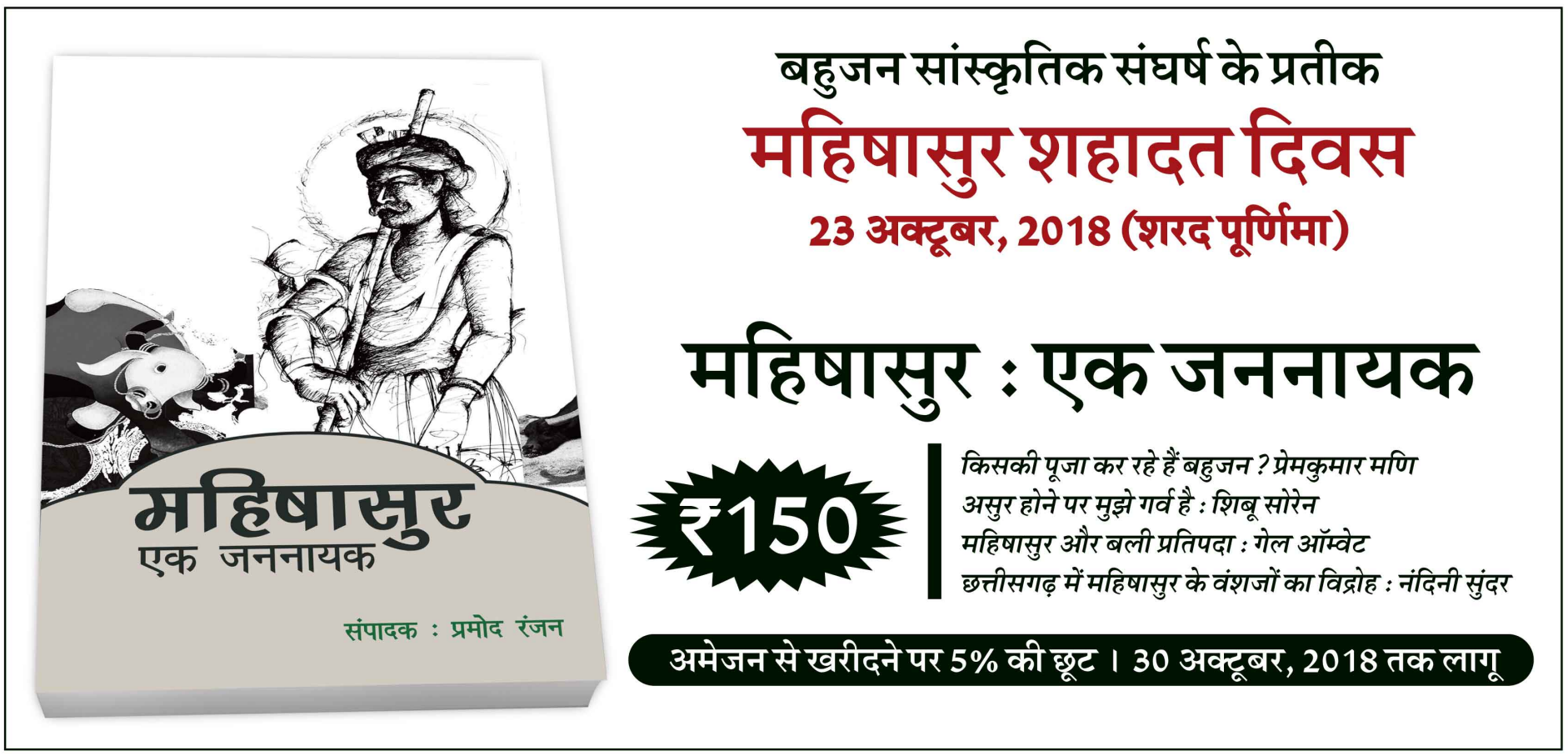

दलित पैंथर्स : एन ऑथरेटिव हिस्ट्री : लेखक : जेवी पवार

महिषासुर एक जननायक

महिषासुर : मिथक व परंपराए

जाति के प्रश्न पर कबीर

चिंतन के जन सरोकार

लेखक के बारे में

ईश मिश्रा

दिल्ली विश्वविद्यालय के हिन्दू कॉलेज में राजनीति विज्ञान विभाग में पूर्व असोसिएट प्रोफ़ेसर ईश मिश्रा सामाजिक आंदोलनों में सक्रिय रहते हैं